माथुर साहब ने अपने संपादकीय के खिलाफ लिखा वो लेख नोटिस बोर्ड पर लगवा दिया

आज पत्रकारिता में 36 वर्षों के लंबे अंतराल के बावजूद मुझे वह दिन बहुत अच्छी तरह याद है, जब मैं दिल्ली के बहादुरशाह जफर मार्ग स्थित टाइम्स हाउस की चौथी मंजिल पर नवभारत टाइम्स के लिए साक्षात्कार देने गया था। राजेंद्र माथुर जी से मेरी यह पहली मुलाकात थी। मैंने उनका नाम भी सुन रखा था और उनका लिखा पढ़ता भी था। उन दिनों मैं जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय में एम.फिल कर रहा था और किसी ऐसी नौकरी की तलाश में था, जिसमें मैं अपनी पढ़ाई भी बेरोकटोक जारी रख सकूं।

जब नवभारत टाइम्स में पत्रकारों की जगह निकली तो मैंने भी आवेदन किया। लिखित परीक्षा पास करने के बाद इंटरव्यू देने आया था। इंटरव्यू के दौरान सबसे ज्यादा सवाल राजेंद्र माथुर जी ने ही पूछे। यह जानने के बाद कि मैं जेएनयू के स्कूल ऑफ इंटरनेशनल स्टडीज में एमफिल कर रहा हूं तो उन्होंने अंतरराष्ट्रीय मुद्दों पर तमाम सवाल पूछे।

इंटरव्यू के लिए आए तमाम दूसरे अभ्यर्थियों को देखकर मुझे नहीं लग रहा था कि मेरा चयन होगा, क्योंकि मुझे तब पत्रकारिता का कोई अनुभव नहीं था, जबकि अन्य अभ्यर्थी पांच से दस साल तक का अनुभव लेकर आए थे। लेकिन नवभारत टाइम्स में मेरा चयन हुआ और मुझे लखनऊ संस्करण भेज दिया गया। जहां से एक साल बाद मुझे फिर दिल्ली बुला लिया गया और तब मुझे माथुर जी के साथ सीधे काम करने का मौका मिला।

ये वो दौर था जब अंग्रेजी अखबारों और पत्रिकाओं का बोलबाला था। राजनीति के गलियारों से लेकर सरकारी अफसरों तक के यहां अंग्रेजी वालों की तूती बोलती थी। लेकिन इसी दौर में राजेंद्र माथुर के संपादन में निकलने वाले नवभारत टाइम्स, जिसमें कुछ समय बाद सुरेंद्र प्रताप सिंह कार्यकारी संपादक के रूप में आ गए, ने हिंदी पत्रकारिता को जो तेवर और धार दी, जिससे अंग्रेजी वाले भी उसका लोहा मानने लगे।

राजेंद्र माथुर जी के साथ मेरे कई निजी अनुभव भी हैं, जिनमें कुछ मैं यहां साझा कर रहा हूं। माथुर जी बेहद सहज और सरल व्यक्तित्व के इंसान थे। असहमति को सम्मान देना कोई उनसे सीखे। उनकी लेखनी और उसकी व्यंजना अद्भुत थी। उनके संपादकीय और लेख समय के दस्तावेज हैं। पंजाब में आतंकवाद के दौरान जब उनके प्रखर लेखन से खफा आतंकवादियों ने उन्हें जान से मारने की धमकी दी और सरकार ने उन्हें सुरक्षा मुहैया करानी चाही तो माथुर जी ने यह कहते हुए साफ मना कर दिया कि जिस दिन लेखक और पत्रकार पुलिस की सुरक्षा में चलेंगे उस दिन कलम मर जाएगी। जरा तुलना कीजिए, आज उन पत्रकारों और संपादकों से जो पुलिस की सुरक्षा पाने के लिए मंत्रियों और मुख्यमंत्रियों के आगे किस तरह नतमस्तक होते हैं।

नए और युवा पत्रकारों की रुचियों और प्रतिभा की पहचान करके उन्हें आगे बढ़ने का मौका देना राजेंद्र माथुर जी की प्रकृति थी। मेरे जैसे और मुझसे वरिष्ठ न जाने कितने पत्रकार आज जहां भी हैं, उसके पीछे माथुर जी का संरक्षण और प्रोत्साहन ही बुनियाद है। उन दिनों जब मैं और मेरे ही हमउम्र कई संपादकीय साथी जो डेस्क पर थे, नभाटा के संपादकीय पृष्ठ पर तमाम राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक और समसामयिक विषयों पर पहला लेख लिखते थे और छपते थे।

अगर कभी लेख लिखने में ढिलाई हो जाए तो माथुर साहब खुद टोक देते थे कि क्या बात है, लिखना बंद कर दिया क्या। माथुर साहब की परिकल्पना थी कि अखबार एक गुलदस्ते की तरह होता है, जिसमें हर रंग हर किस्म और हर महक के फूल होने चाहिए। इसीलिए राजेंद्र माथुर की टीम में एस पी सिंह, विष्णु खरे, आलोक मेहता, मधुसूदन आनंद, राजकिशोर, विष्णु नागर, सूर्यकांत बाली, प्रयाग शुक्ल, रामबहादुर राय जैसे दिग्गज और हर विचारधारा के पत्रकार थे। उन दिनों नभाटा के संपादकीय पेज पर किसी भी धारा के लेख छपने की आजादी थी।

एक बेहद दिलचस्प वाक्या। राजेंद्र यादव के संपादन में निकलने वाली हंस पत्रिका में जनवादी पत्रकार आनंदस्वरूप वर्मा ने एक लेख लिखकर राजेंद्र माथुर के लेखन पर आलोचनात्मक टिप्पणी की। माथुर साहब ने उस लिख को इनलार्ज कराकर नोटिस बोर्ड पर लगवाया और अपनी आलोचना को हाईलाइटर से रेखांकित करके टिप्पणी लिखी कि सभी संपादकीय साथी इसे अवश्य पढ़ें। खुद आनंदस्वरूप वर्मा बताते हैं कि लेख लिखने के बाद उन्होंने संकोचवश माथुर साहब से मिलना बंद कर दिया, जबकि पहले खूब मिलते थे। इसी दौरान वर्मा को दक्षिण अफ्रीका के पहले आम चुनाव में वहां जाने का मौका मिला.। यह बात जब माथुर साहब को पता चली तो उन्होंने वर्मा को बुलाया और पहले तो कहा कि मिलना क्यों बंद कर दिया। फिर बोले कि सुना है दक्षिण अफ्रीका जा रहे हो, वहां से नभाटा के लिए लिखिए। आनंद स्वरूप वर्मा ने लिखा और राजेंद्र माथुर ने छापा। कल्पना कीजिए आज के दौर में क्या यह मुमकिन है।

और भी बहुत सारे अनुभव हैं राजेंद्र माथुर जी के साथ मेरे और तमाम साथियों के। उन दिनों बहादुरशाह जफर मार्ग में टाइम्स और एक्सप्रेस के दफ्तरों में काम करने वाले पत्रकारों का आपस में खूब आना-जाना होता था। नवभारत टाइम्स में राजेंद्र माथुर और जनसत्ता में प्रभाष जोशी हिंदी के दो शिखर संपादक यहीं बैठते थे। अखबारों के दफ्तर आज के दौर की तरह कार्पोरेट कार्यालय नहीं थे। तब न्यूज रूम जीवंत होते थे और खबरों पर राजनीति पर मुद्दों पर गरमा गरम बहस होती थी। कई बार हम युवा पत्रकार किसी मुद्दे पर बहस करते थे तो अचानक पता चलता था कि बगल में चुपचाप माथुर साहब खड़े सुन रहे हैं। हम लोग उन्हें देखकर झेंप जाते थे तो वह कहते थे आप लोग बातचीत करते रहिए और मुझे सुनने दीजिए।

उन दिनों नभाटा में लेख और रिपोर्ट लिखने की होड़ होती थी। मुझे डेस्क से जब रिपोर्टिंग के लिए पश्चिमी उत्तर प्रदेश संवाददाता बनाकर मेरठ भेजा गया तो एक बार राजेंद्र माथुर जी को मेरठ में एक कार्यक्रम में बतौर मुख्य अतिथि आना था। लेकिन उसी दिन मुझे अचानक एक रिपोर्टिंग के सिलसिले में मुजफ्फरनगर के दूर दराज देहात में जाना पड़ गया। जब लौटा तो रात के नौ बज चुके थे। मेरठ आफ्रिस आने पर पता चला कि माथुर साहब कार्यक्रम के बाद कुछ देर के लिए दफ्तर भी आए थे। मैं बेहद घबरा गया कि प्रधान संपादक आए और मैं नहीं मिला। मैंने रात में ही उन्हें टेलीप्रिंटर से संदेश

भेजकर बताया कि मैं एक बड़ी खबर के सिलसिले में गया था, लेकिन लौटने में देर हो गई,इसलिए आपसे नहीं मिल सका। आशा है कि आप इसे अन्यथा नहीं लेंगे।

अगले दिन सुबह साढ़े ग्यारह बजे मेरी मेज पर माथुर साहब का जवाब टेलीप्रिंटर संदेश रखा था, जिसमें लिखा था कि मेरी खातिरदारी से ज्यादा जरूरी है खबर पर काम करना। मैं इसे बिल्कुल अन्यथा नहीं लूंगा लेकिन अगर तुम खबर छोडकर मेरे लिए रुकते तो जरूर अन्यथा लेता। ऐसे थे राजेंद्र माथुर, जिन्हें मैं हिंदी पत्रकारिता के स्वर्णकाल का महानायक मानता हूं। उनकी स्मृतियां हमेशा मेरे जैसे तमाम उन पत्रकारों के साथ रहेंगी, जिनकी पत्रकारिता की बुनियाद में राजेंद्र माथुर की शिक्षा दीक्षा है।

(लेखक अमर उजाला के सलाहकार संपादक हैं)

साभार-https://www.samachar4media.com/ से